[redacted]

RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल. 0011/2012-14

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

कृण्वन्तो ओ३म् विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

मूल्य : 2 रु.
वर्ष : 70 अंक : 37
सृष्टि संवत् 1960853114
15 दिसम्बर 2013
दयानन्दाब्द 189
वार्षिक : 100 रु.
आजीवन : 1000 रू.
दूरभाष : 2292926, 5062726

जालन्धर

वर्ष-70, अंक : 37, 12/15 दिसम्बर 2013 तदनुसार 1 पौष सम्वत् 2070 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

आओ! वेदोद्यान चलें

-ले० श्री भद्रसेन 182-शालीमार नगर होशियारपुर

(गतांक से आगे)

इस समस्या के समाधान की दृष्टि से महर्षि दयानन्द सरस्वती के सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास की निम्न पंक्तियां विशेष मार्गदर्शक सिद्ध होती हैं।

''इससे क्या सिद्ध हुआ कि जहां-जहां स्तुति, प्रार्थना उपासना, सर्वज्ञ, व्यापक, शुद्ध, सनातन और सृष्टि कर्ता आदि विशेषण लिखे हैं, वहीं-वहीं इन नामों से परमेश्वर का ग्रहण होता है-

ऐसे प्रमाणों में विराट्, पुरुष, देव, आकाश, वायु, अग्नि, जल, भूमि आदि नाम लौकिक पदार्थों के होते हैं। क्योंकि जहां-जहां उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय, अल्पज्ञ, जड़, दृश्य आदि विशेषण भी लिखे हों, वहां-वहां-परमेश्वर का ग्रहण नहीं होता। वह उत्पत्ति आदि व्यवहारों से पृथक् है। और उपरोक्त मन्त्रों (यजु० 31, 5; 8; 12 इत्यादि) में उत्पत्ति आदि व्यवहार हैं इसी से यहां विराट् आदि नामों से परमात्मा का ग्रहण न हो के संसारी पदार्थों का ग्रहण होता है। किन्तु जहां-जहां सर्वज्ञादि विशेषण हों वहां-वहां परमात्मा, और जहां-जहां इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और अल्पादि विशेषण हों वहां-वहां जीव का ग्रहण होता है। ऐसा सर्वत्र समझना चाहिए। क्योंकि परमेश्वर का जन्म मरण कभी नहीं होता। इससे विराट् आदि नाम और जन्मादि विशेषणों से जगत् के जड़ और जीवादि पदार्थों का ग्रहण करना उचित है, परमेश्वर का नहीं।''

महर्षि की इस कसौटी से बहुत सारे स्थलों का बड़ा सुन्दर समाधान हो जाता है, पर द्विवचन, बहुवचन वाले वर्णन उलझन में डाले ही रखते हैं।

वस्तुतः वेद का वर्णन बहुत सारी विविधताओं से भरा हुआ है। अतः जब सभी वर्णनों को एक सूत्र में पिरोने का प्रयास किया जाता है, तो कठिनाई आती है। जैसे कि निरुक्तकार ने अग्नि, इन्द्र, वैश्वानर, जातवेदस् आदि पदों के अनेक निर्वचन दिए। यह जरूरी नहीं, वे सारे एक में ही लागू हो जायें। हां प्रकरण भेद या वस्तुभेद से भी उनकी संगति अनुगत हो जाती है। ब्राह्मणग्रन्थों में इन्द्र आदि को अनेकों का वाचक बताया है। इन्द्रतम शब्द गुणवाचक पटुतम की तरह प्रयुक्त हुआ है।

यह ठीक है, कि वेद में अधिकतर वर्णन संजीवात्मक है। अतः प्रत्येक को प्रत्यक्ष रूप में रखकर चित्रण किया जाता है। जिससे हर वर्ण्य वस्तु इष्टदेव झलकती है। जैसे कि-

आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे॥
यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः।
उशतीरिव मातरः॥ ऋ० 10,9,1-2॥

जल सुखदायक है, वे हमें शक्ति धारण करायें और महान आनन्द तथा देखने में सहायक हों।

(हे जलो!) तुम्हारा जो रस कल्याणकारक है, उससे युक्त करो। जैसे मातायें चाहती हुई कल्याणकारी होती हैं।

10 वैदिक वाङ्मय

वैदिक वाङ्मय का अर्थ है, वेद से जुड़ी हुई पुस्तकें। यह एक सर्वमान्य बात है, कि संसार के साहित्य की प्राचीनतम पुस्तक वेद ही है। भारतीय धर्मग्रन्थों में वेद प्राचीनतम होने के साथ एक प्रतिष्ठित स्थान भी रखते हैं। सभी विद्याओं के भारतीय शास्त्र एक स्वर से वेदों को अपना सर्वस्व तथा मूल-आधार मानते हैं। तभी तो अपने-अपने विषय के मूलस्त्रोत के साथ अपने विवेचन की पुष्टि के लिए वेद को परम प्रमाण मानते हैं। इसीलिए ही प्रारम्भ से ही वेद को समझने-समझाने के लिए अनेकविध प्रयास हुए हैं।

वेद के पाठ-कभी वेद को अपनी अमूल्य धरोहर मानते हुए उसके ब्राह्म स्वरूप के संरक्षणार्थ पद-क्रम-घन-जटा-माला जैसे आठ पाठों का विकास हुआ। जिससे वेद के मूल-पाठ में किसी प्रकार का कोई विकार, परिवर्तन न आ सके, तो कभी वेद के धार्मिकपन में संवर्धन के लिए यज्ञ आदि कृत्यों में मन्त्रों का विनियोग किया गया। क्योंकि वेद ईश्वरीय नित्यज्ञान के साथ भारतीयों के प्राचीन गौरव-ग्रन्थ तथा धर्मग्रन्थ हैं। तभी तो आज भी भारतीयों में से एक बहुत बड़ा वर्ग अपने धार्मिक जप-स्मरण, पूजा-पाठ, यज्ञ-संस्कार, व्रत-पर्वों में श्रद्धा और आदर के साथ वेद-मन्त्रों का प्रयोग करता है।

ब्राह्मण-वेद के बाह्य और आन्तरिक स्वरूप के स्वारस्य को हृदयंगम करने के लिए ब्राह्मण ग्रन्थों के रूप में प्रकृष्ट प्रयास हुआ। जैसे कि पूर्व दर्शाया गया है, कि वेद का एक नाम ब्रह्म है और उससे अपत्य (=सन्तान=फैलाव) अर्थ में तद्धित प्रत्यय होने पर ब्राह्मण शब्द बनता है। जैसे पुत्र पिता के वंश, कुल, परिवार, भाव, सम्पति का प्रसारक, संरक्षक होता है, तभी तो कहते हैं-'कटोरे में कटोरा-बेटा बाप से भी गोरा।' ऐसे ही ब्रह्म-वेद के स्वरूप के संरक्षक-प्रसारक ही ब्राह्मण ग्रन्थ सिद्ध हुए। इसीलिए ही वेद के ब्रह्मा आदि ऋषियों द्वारा किए गए प्रवचन, व्याख्यान ही कालान्तर में ब्राह्मण ग्रन्थों के रूप में संकलित हुए। व्याख्यान होने से ही ब्राह्मण ग्रन्थ प्रवचन नाम से अभिहित हुए हैं।

(क्रमशः)

www.thearyasamaj.org

संसार में अशान्ति का कारण क्या है?

-ले० श्री सुरेश शास्त्री सभा कार्यालय जालन्धर

भगवान मनु ने कहा है कि शरीर जल से शुद्ध होता है, मन सत्यविचार सत्याचरण से, बुद्धि ज्ञान से तथा आत्मा विद्या और तप से शुद्ध होता है। इसे हमें इस प्रकार समझना चाहिए कि हमारे चार स्थानों को चार वस्तुओं की आवश्यकता होती है। शरीर के लिए अर्थ की क्योंकि भोजन के बिना शरीर की स्थिति नहीं है। मन के लिए काम, बुद्धि के लिए धर्म और आत्मा के लिए मोक्ष की आवश्यकता होती है। धर्म को छोड़कर यदि अर्थ और काम की प्राप्ति होती है तो मनुष्य स्वार्थी और कामी बन जाता है। जब तक बुद्धि अपनी धर्म की आवश्यकता को पूर्ण करके शरीर और मन की आवश्यकताओं का आश्रय नहीं लेगी, तब तक मन निस्वार्थ और निष्कामता की पवित्रता को ग्रहण नहीं कर सकता, उस दशा में आत्मा को मोक्ष का मार्ग सूझता ही नहीं। इन सबको उचित प्रकार से संचालन करने वाला धर्म है जिसकी आवश्यकता सबसे मुख्य है। धर्म की विवेचना बड़ी गहन है किन्तु मनु महाराज के एक वाक्य में कहा है- **आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्** अर्थात् जिस बात को तू अपने लिए पसन्द नहीं करता, उसे दूसरे के साथ मत कर । कोई मनुष्य पसन्द नहीं करता कि उसकी वस्तु कोई दूसरा व्यक्ति उठा ले जाए। कोई भी व्यक्ति अपने बच्चे को दूसरे के हाथ से मारा जाता हुआ देखकर प्रसन्न नहीं होगा। कुवचन, अन्याय, विश्वासघात, छल, कपट कोई भी व्यक्ति अपने लिए पसन्द नहीं करता तो प्रत्येक मनुष्य के लिए आवश्यक हो गया है कि दूसरे की वस्तु का अपहरण करना, अन्य प्राणी का हनन करना, दूसरे से कुवाक्य, अन्याय, विश्वासघात, छल, कपट का व्यवहार कभी न करे। तभी संसार की अशान्ति दूर होगी और दुःख का लेश भी दिखाई न देगा। इसलिए **यतोऽभ्युदयनिः श्रेयःसिद्धिः सः धर्मः** अर्थात् जिसके द्वारा मनुष्यों का उत्थान हो और कल्याण की प्राप्ति हो वही धर्म है। यह धर्म की वैज्ञानिक और सार्वभौम परिभाषा है।

जब मनुष्य अपनी वस्तु के चुराए जाने पर दुख और दूसरे की वस्तु चुराने में हर्ष और उत्सुकता प्रकट करेगा। स्वयं कड़वा वचन भी न सुनेगा, अन्य को कुवाक्य कहने तथा अपमानित करने में आनन्द अनुभव करेगा। परनारी को कुदृष्टि से देखना, धोखा देना, विश्वासघात, छल कपट, दूसरों को पीड़ा देना आदि कार्यों से नहीं डरेगा तो संसार में उसी प्रकार अशान्ति ,कलह, दुःख बढते जाएंगे और मनुष्य पतित होते चले जाएंगे। बुद्धि के साथ धर्म के न होने से जो कुछ भी कर्म शरीर और मन से होगा उससे मनुष्य स्वार्थी और कामी बनता जाएगा। स्वार्थी और कामी मनुष्य के साथ कभी दैवी संपत् संगृहीत नहीं हो सकती। इस कारण आत्मा कभी मोक्ष की ओर प्रगति कभी नहीं करेगा।

शास्त्र में कहा गया है कि **धर्मो रक्षति रक्षितः** अर्थात् मनुष्य धर्म को त्याग देता है तो धर्म उसे नष्ट कर देता है और जो धर्म की रक्षा करता है तो धर्म उसकी रक्षा करता है। ठीक जिस प्रकार मनुष्य वस्त्रों को मैला कर लेगा तो वस्त्र उसे मैला गन्दा बना देता है और जो वस्त्रों को साफ करके पहनता है वस्त्र उसे साफ बना देते हैं। आज प्रायः देखा जाता है कि निर्धन, पददलित, अधिकारवंचित, श्रमजीवी आदि छोटी और मध्यमश्रेणी के लोग ही दुखी नहीं हैं किन्तु धनी, पदाधिकृत, शासक आदि उच्च से उच्च व्यक्ति भी शान्ति की अनुभूति नहीं कर रहा है। अधिकार, धन,शासन आदि के गौरव को प्राप्त करके भी अशान्त और दुखी है। इसका एकमात्र कारण यह है कि चारों ओर से लूट खसूट, रिश्वत, चोरबाजारी और विश्वासघात है, छल-प्रपंच है, धनी दूसरों का शोषण कर रहा है। जिसके हाथ में अधिकार है वह दूसरों को अन्याय से पीड़ित कर रहा है। परस्पर में विश्वास नहीं, थोड़े से मतभेद के कारण मानवता को छोडकर नृशंस हत्या करने को उद्यत हो जाता है। जब दूसरी ओर से उसके साथ यही व्यवहार होता है तो वह अधर्म अत्याचार कहकर शोर मचाता है और धर्म की दुहाई देता है। किन्तु दूसरे के साथ अनुचित व्यवहार करने वाले व्यक्ति ने कभी सोचा भी नहीं कि इसे भी इतना ही कष्ट पहुँच रहा होगा, जितना किसी अन्य व्यक्ति के बुरे व्यवहार ने मुझे पहुँचाया है।

जब धर्म की भावना दूर हो जाती है तो स्वार्थी और कामी बनकर मनुष्य जो कुछ भी करता है उसमें किसी का भला बुरा नहीं देखता। स्वार्थी दोषं न पश्यति के अनुसार वह धर्माधर्म के विवेचन से दूर होकर बुराईयों से बच ही नहीं सकता। ऐसा मनुष्य देखने में तो मानव प्रतीत होता है किन्तु उसका संचालन जिस आत्मा के द्वारा हो रहा है, वह दानवीय भावनाओं से भरा हुआ है। ऐसे लोगों की वृद्धि ने ही संसार से शान्ति को मिटाकर सर्वत्र अशान्त वातावरण उत्पन्न कर दिया है। आसुरी भावनाओं से भरा व्यक्ति कौन सा पाप नहीं कर सकता। आज से पाँच सहस्र वर्ष पूर्व महर्षि व्यास ने चिल्ला कर कहा-

ऊर्ध्वबाहु विरौम्येष न हि कश्चिच्छृणोति माम्।

धर्मादर्थश्च कामश्च स धर्मः किं न सेव्यते।।

अर्थात् मैं भुजा उठाकर चिल्ला रहा हूँ परन्तु कोई नहीं सुनता और जिस धर्म के द्वारा अर्थ काम की भली प्रकार से प्राप्ति होती है उस धर्म का पालन कोई नहीं करता। इसी कारण से मनुष्य के चरित्र के स्तर में धर्म का सर्वथा अभाव हो गया है, केवल अर्थ और काम रह गये जो अनेक अनर्थों की सृष्टि कर रहे हैं। दर्शनकार ने ठीक कहा है- उपदेश्योपदेष्टृत्वात् तत् सिद्धिरितरथाऽन्ध परम्परा, अर्थात् जहाँ धर्मोपदेशक ठीक होते हैं और सुनने वाले भी ठीक होते हैं वहीं धर्मार्थ काममोक्ष की सिद्धि होती है। जहां सुनने सुनाने और आचरण का अभाव होता है वहाँ अन्ध परम्परा चल पड़ती है, पापाचार फैल जाते हैं। पापान्धकार में लोगों को सन्मार्ग दिखाई नहीं देता है। बस मनुष्य में नैतिकता का संचार करना ही धर्म का वास्तविक उद्देश्य है, किन्तु भोगवाद और प्रकृतिवाद ने मनुष्य को इतना अन्धा बना दिया है कि वह धर्म और ईश्वर नाम की किसी वस्तु को देखना नहीं चाहता। हमारे विचार में इस्लाम, ईसाइयत एवं हिन्दुओं में प्रचलित रूढ़िवादियों को ही लोग धर्म समझते हैं और उन रूढिवादों का नियामक और संचालक ईश्वर को मानते हैं। इस प्रकार धर्म और ईश्वर संसार में अज्ञानी लोगों के लिए झगड़े का मूल कारण हैं। इसी तरह धर्म और ईश्वर को सब जगह से निकाला जा रहा है। किन्तु धर्म वह वस्तु है जो संसार को शांति देता है और लोगों को ऊँचा उठाता है। आचारप्रभवो धर्मः धर्मस्य प्रभुरच्युतः अर्थात् ऊँचे आचार का नाम धर्म है और उस धर्म के स्वामी का नाम ईश्वर है। धर्म और ईश्वर के इस व्यापक लक्षण को समझे बिना लोग इसका विरोध करते हैं। यह विरोध संसार में अनाचार और अशान्ति का हेतु है। क्योंकि सच्चे धर्म की शिक्षा के अभाव में विज्ञान की उच्च पढाई, साहित्य और इतिहास की बहुत सी परीक्षाएं भी मनुष्य को चरित्रवान नहीं बना सकती। जीवन के सभी क्षेत्रों में नैतिकता आवश्यक है जो मानवता उत्पन्न कर सके। इसका एकमात्र साधन धर्म है जिससे देश के चरित्र का स्तर ऊँचा हो सकता है। ऐसे व्यापक और सार्वभौम धर्म का सन्देश सुनाने के लिए वेद का मार्ग ही सफल मार्ग हो सकता है।

www.thearyasamaj.org

सम्पादकीय.....

मनुष्य जीवन का ध्येय

जीवन का ध्येय क्या है? जहां तक मैं समझ सका हूँ जीवन का ध्येय ऐश्वर्य सम्पन्न होकर निस्वार्थ जनार्दन पूजा अर्थात् जनसेवा द्वारा भगवान का अति सामीप्य प्राप्त करना है। हमें सभी कार्य परमात्मा की देखरेख में करने हैं। भगवान हैं और वे हमारे भाव विचार संकल्प तथा कार्य सभी जानते हैं और देखते हैं, ऐसा पूर्ण निश्चय करके इस प्रकार जीवन व्यवहार करना है जो भगवान के अनुकूल हो। निस्वार्थ और निष्कपट भाव से की हुई जनसेवा ही वह कार्य है जिससे भगवान प्रसन्न होते हैं। भगवान के भजन का क्रियात्मक रूप जनसेवा अर्थात् यज्ञ है। यज्ञ वह कार्य है जिसमें धर्म ऋत और सत्य सम्मिलित रूप से कार्य करने में स्पष्ट दिखाई देते हैं। याज्ञिक मनुष्य प्रत्येक वस्तु अपने भगवान को ही समर्पण करता है। वैसे तो सुव्यवस्था लाने के लिए भी समाज में निजी स्वार्थ का नियमन करना परम आवश्यक है। जब मनुष्य अपने आपको समर्पण कर देता है तो वह अपना स्वार्थ भूलकर देश जाति और जनता के लिए अपने आपको समर्पित कर देता है। संकीर्ण हृदय वाला आत्मसमर्पण नहीं कर सकता। इसीलिए तो महत् ब्रह्म के गुणस्मरण द्वारा हृदय को विशाल बनाकर ही आत्म बलिदान की भावना जागृत की जाती है। समर्पण की भावना उदित होकर कभी दबे नहीं, नित्य नये-नये रूप में विकसित होती जाए तो मनुष्य देवत्व को प्राप्त करता है। देवत्व को प्राप्त करने से पहले आत्म ज्योति अवश्य प्रदीप्त होनी चाहिए और अपनी चित्तशक्ति जगी होनी चाहिए। आवेश में किया हुआ समर्पण कोई समर्पण नहीं है, उससे कोई स्थाई प्रभाव नहीं होता और मानव का विकास भी नहीं होता। जीवन ज्योति का विकास उस विवेकी मनुष्य में होता है जिसका मन सशक्त हो और स्थिर हो। चञ्चल मन वाला मनुष्य उद्वेग में आकर चाहे भला या बुरा कुछ भी कर बैठता है, उससे जीवन विकसित नहीं हुआ करता।

ध्येय की प्राप्ति के लिए साधना की अपेक्षा है। साधना पवित्र हो और अविरत रूप से होती रहे, उसमें विघ्न बाधाएं न आवें अथवा आवें तो उनका पराभव हो सके तभी साधना सफल समझी जाती है। मनुष्य का मन स्वस्थ हो, बुद्धि निर्मल हो, इन्द्रियां शक्तिशाली हों तो गमन श्रेय मार्ग में ही होगा और धीरे-धीरे श्रेय ही प्रेय हो जाएगा। यह स्थिति बहुत ऊँची है पर मनुष्य इसे सतत साधना के द्वारा प्राप्त कर सकता है। ऊँची स्थिति में पहुँचकर भी गिरने का भय रहता है यदि मनुष्य में शिष्टाचार, सदाचार, नम्रता तथा विनय आदि का अभिमान आ जाए। कर्त्तव्य परायणता में मनुष्य का सुधार होता रहता है। प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह अपने अन्दर इन गुणों को अवश्य धारण करें। यही गुण हैं जो मनुष्य के अन्दर देवत्व की भावना को दृढ़ कर सकते हैं। जब तक मनुष्य के अन्दर शुभ गुणों का भाव रहता है तो वह प्राणीमात्र की भावना को धारण करके श्रेष्ठ कर्म करता है। जब मनुष्य में से सदाचार, शिष्टाचार तथा दया की भावना दूर हो जाती है तो वह पशु की तरह आचरण करने लगता है।

प्रत्येक मनुष्य की यह आकांक्षा है कि हमें शान्ति, तृप्ति, पूर्णता, सौंदर्य तथा आनन्द की प्राप्ति हो। मनुष्य की यह आकांक्षा पूरी हो सकती है यदि वह प्रत्येक कर्मों में उस सर्वव्यापक परमात्मा का स्मरण करें। हमारे सभी कार्य अहिंसा और सत्य से ओतप्रोत हों तो हमारी भगवान में श्रद्धा अटल और निश्चल समझी जाएगी। पूर्ण निश्चय से निर्भान्त होकर अपने कर्त्तव्य स्वयं निर्धारित करेंगे और कभी उन्हें पूरा करने से नहीं चूकेंगे। हमारे ऊपर सर्वव्यापक ज्योति है क्योंकि वह ज्योति सबमें है, सब काल में है और सब जगह है। हमारा अन्तरात्मा उस अनन्त भगवान् में हमारी प्रीति सदा बनी रहे उनकी सुन्दरतम ज्योति हमारे अन्तरात्मा को प्रेरित करती रहे तो हमारा हृदय ज्योति से रिक्त नहीं हो सकता। जितना-जितना अपना अन्त:करण रूपी दर्पण स्वच्छ और निर्मल होता जाएगा उस शुभ्रज्योति के दर्शन सुलभ हो जाऐंगे। हमारा कर्त्तव्य अपनी अन्दर और बाहर की शुद्धि है। जब हमारा अन्त:करण उस पवित्र ज्योति से आलोकित हो जाएगा तभी हमारी धारणा पक्की होगी, तभी हमारी बुद्धि निश्चयात्मिका होगी हममें पूर्ण अड़िग विश्वास होगा। विश्वास की महिमा महान है जिसका परमात्मा में विश्वास है उसमें आत्मविश्वास है। आत्मविश्वासी में परमात्मा का विश्वास दृढ होता है। यह वह दृढ़भूमि है जिसे प्राप्त करके मनुष्य की संदेह और संशय से निवृत्ति हो जाती है और उसके सभी कार्यों में अनुपम सौन्दर्य दिखाई देने लगता है। यह है जीवन का सौन्दर्य और उसकी पवित्रता।

अपने जीवन के ध्येय को प्राप्त करने तथा उन्नतिपथ के पथिक के लिए अभिमान वंचक का काम करता है। अभिमान मनुष्य को भूलभुलैया में डालकर पथच्युत कर देता है और साधक का पतन आरम्भ हो जाता है तथा जीवन का ध्येय ओझल होकर मनुष्य के जीवन में उच्छृङ्खलता आ जाती है। ऐसी अवस्था से बचना चाहिए। कभी भी आत्मोन्नति की डींग नहीं मारनी चाहिए। मनुष्य उन्नति के पथ पर चढ़कर गिरा करता है। चढ़ता है एक-एक पग करके, पर असावधानी ओर अभिमान से गिरता है एकदम। इसलिए साधना में अभिमान न आने पाए और साथ ही आत्म सम्मान न जाने पाए। इससे जगे हुए विवेक को सदा जगा हुआ ही रखना चाहिए। मनुष्य का विवेक सोया नहीं कि वह अपने लक्ष्य से भटक जाता है। चेतनता और सावधानता श्रेय पथिक के लिए ज्योतिस्तम्भों के समान है। मनुष्य अपनी चेतनता और सावधानता न मन्द होने दें तो अवश्य उसे तेज ओज और पराक्रम प्राप्त होते हैं। इसीलिए नीतिकार ने कहा है कि अन्य सभी बातों में जैसे खाना-पीना, उठना-बैठना, चलना-फिरना, बच्चे पैदा करना यह सब मनुष्य और पशुओं में समान रूप से दिखाई देने वाली बातें हैं, परन्तु मनुष्य और पशु में जो फर्क दिखाई देता है वह मनुष्य की बुद्धि, विवेक और धर्म के कारण है जो उसे पशुओं से अलग करता है। पशु के जीवन का कोई लक्ष्य नहीं है, उसे जितनी बुद्धि परमात्मा ने दे रखी है उसी से उसका जीवन चलता है। पशु के ज्ञान में कोई वृद्धि नहीं होती। इसके विपरीत मनुष्य को परमात्मा ने इस संसार में बुद्धि, विवेक के साथ लक्ष्य देकर भेजा है। मनुष्य अपने ज्ञान के द्वारा अपने जीवन को उन्नत बना सकता है।

साधना में व्रत और संकल्प की बड़ी महिमा है। जो मनुष्य अपने जीवन का लक्ष्य निर्धारित कर लेता है और उसे पूरा करने के लिए संकल्प लेता है उसमें परमपिता परमात्मा उसका सहायक बनता है और साधक ऋत की प्राप्ति में सफल होता है। ऋत को जीवन व्यवहार में लाने से जीवन के ध्येय की पूर्ति के सभी साधन सुगम हो जाते हैं। ऋत और सत्य का निकटतम सम्बन्ध है। ऋत और सत्य का जीवन ही धर्माचरण है, यही यज्ञमय जीवन है इसी में जीवन की सफलता है और यही मनुष्य जीवन का ध्येय है।

-प्रेम भारद्वाज संपादक एवं सभा महामन्त्री

www.thearyasamaj.org

वेद का ज्ञान ईश्वरोक्त है अथवा मनुष्योक्त

-ले० श्री मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

स्वाध्याय करते हुए हमारा ध्यान एक लेखक के इन शब्दों की ओर गया-'अपने विस्तृत अध्ययन के परिणाम स्वरूप अब मैं इस निष्कर्ष पर पहुंच चुका हूं कि वेद ईश्वरोक्त नहीं है जैसा कि ऋषि दयानन्द और उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज की मान्यता है।' किसी भी व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह जो चाहे स्वीकार करे। हमें यह पढ़कर आश्चर्य हुआ और हमें लगा कि हम व्यक्तिगत रूप से स्वयं का पुन: आत्मावलोकन कर जानें कि हमारी वेदों के ईश्वरप्रोक्त होने की मान्यता में कहीं कोई कमी तो नहीं है ? अत: हमने विचार किया और हमें लगा कि वेदों के ईश्वरीय ज्ञान होने को कई प्रकार से सिद्ध कर सकते हैं। यदि मोटे रूप में सोचें तो मनुष्य के पास ज्ञान प्राप्ति के जो भी साधन हैं, वह ईश्वर ने सभी मनुष्यों को नि:शुल्क प्रदान किए हैं। ईश्वर के दिए हुए साधनों से मनुष्य ज्ञान प्राप्ति के लिए अग्रसर होता है। इसके लिए उसे किसी न किसी भाषा का ज्ञान होना चाहिये। इस जन्म में मनुष्यों को भाषायें अपनी माता, अन्य कुटुम्बियों, अध्यापकों, समाज व पुस्तकों से प्राप्त होती हैं जिनमें मुख्य माता है। यह भाषायें जो वह अपनी माता आदि से सीखता है इन्हें माता आदि लोग बनाते नहीं अपितु प्रयोग करते आ रहे हैं। तो भाषाओं की जननी व मूल भाषा क्या कोई अन्य भाषा है ? इसका उत्तर है कि हां एक भाषा वैदिक संस्कृत है जो सभी भाषाओं की जननी व मूल भाषा है। उस भाषा को किसने बनाया तो ज्ञात होता है कि उसकी जननी जगदम्बा माता ईश्वर है और यही भाषा परमात्मा की अपनी भाषा भी है। परमात्मा की अपनी भाषा से हमारा तात्पर्य यह है कि परमात्मा एक चेतन सत्ता होने के कारण जो कार्य करता है उसके लिए उसे कुछ विचार व चिन्तन भी करना पड़ता है जिसके लिए उसे भी भाषा चाहिये और वह भाषा भी वेद-भाषा संस्कृत है। इसी भाषा को उसने अमैथुनी सृष्टि में आदि ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को दिया था और वेद भी उसके द्वारा इसी भाषा में दिए गये। जब माता पिता अपने बच्चों को कोई चीज़ देते हैं तो यह दर्शाते नहीं कि वह उनकी अपनी है और वह उसे बालक को दे रहे हैं। बालक को इससे कोई सरोकार भी नहीं होता। वह तो उपयोगी चीज़ों को लेता जाता है और उससे लाभान्वित होता है। ईश्वर ने वेदों का ज्ञान दिया कि मान्यता विगत लगभग 2 अरब वर्षों से प्रचलित है। इसके विरुद्ध कोई अन्य पुष्ट तथ्य उपलब्ध नहीं हैं तो इसे स्वीकार न करने का कोई औचित्य नहीं है। यह सत्य है कि यदि परमात्मा सृष्टि के आरम्भ में भाषा का ज्ञान न कराता तो आज तक मनुष्य भाषा नहीं बना सकते थे। भाषा का बनाना और वह भी वेद जैसी भाषा, यह तो अपौरूषेय कार्य है। जब मनुष्य भाषा ही नहीं बना सकते हैं तो ज्ञान बनाना तो बहुत दूर की बात अर्थात् असम्भव है। इस बारे में विवेचन हम आगे प्रस्तुत करेगें। अत: किसी का यह मानना कि वेद ईश्वरोक्त नहीं मनुष्योक्त हैं, असम्भव है। मन्त्र-संहिता के रूप में विद्यमान वेदों व इनमें निहित ज्ञान को प्रकाशित करने का श्रेय ज्ञान का साधन, मनुष्य शरीर व इसकी सभी इन्द्रियों को बना कर मनुष्यों को देने वाले परमेश्वर को है।

यहां आर्य समाज के पहले नियम पर दृष्टि डालना प्रासंगिक है। यह नियम और कुछ नहीं अपितु वेद-ज्ञान का निचोड़ है। नियम है, सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है। इसके अनुसार सब सत्य विद्याओं का आदि मूल परमेश्वर है। सभी अपौरूषेय पदार्थ भी, जिनका ज्ञान विद्या से होता है, ईश्वर के द्वारा बनाये हुए होने से इन सब पदार्थों का आदि मूल भी वही परमेश्वर है। इस प्रकार सब सत्य विद्याओं एवं अपौरूषेय पदार्थो का मूल अर्थात् निमित्त कारण ईश्वर को माना गया, बताया गया व सिद्ध किया गया है। इस नियम से यह ज्ञात होता है कि ईश्वर संसार का बनाने वाला है एवं उसके इस संसार को बनाने का पूर्ण ज्ञान है। हम देख रहे हैं यह संसार विगत लगभग 2 अरब वर्षों से भली प्रकार से चल रहा है तो इसका सीधा अर्थ है कि ईश्वर इस संसार की रचना, उत्पत्ति व इसका पालन करने के साथ-साथ इसे चला भी रहा है। जब ईश्वर संसार को बना सकता है, चला सकता है और उसके इस बारे में पूरा-पूरा ज्ञान व शक्ति भी है तो प्रश्न होता है कि उस ज्ञान को जितना मनुष्यों के जीवन-निर्वाह व उपयोग के लिए आवश्यक है, क्या वह दे सकता है या नहीं और क्या उसने वह ज्ञान हमें दिया था या नहीं और यदि दिया तो कब दिया।

जब हम शरीर स्थित ज्ञानेन्द्रियों को देखते हैं तो हम पाते हैं कि ईश्वर ने इनको इतना सूक्ष्म व आवश्यकता को पूरा करने वाला ही नहीं अपितु इनको इतनी अधिक सामर्थ्य एवं क्षमता प्रदान की है जिसका पूरा उपयोग शायद ही आज तक किसी ने किया हो ? सभी ज्ञानेन्द्रियों के सभी विषय भी परमात्मा ने बना कर हमें प्रदान किये हैं। इन विषयों का ज्ञान प्राप्त करना मनुष्यों का काम है। ज्ञान प्राप्त होता है भाषा से, जो मुंह से बोली जाती है। इस भाषा के न होने पर ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता। भाषा यदि है तो हम विचार कर सकते हैं, चिन्तन कर सकते हैं व किसी विषय के सभी पक्षों पर विचार करने सृष्टि क्रम के अनुरूप पदार्थ का वास्तविक या यथार्थ स्वरूप निर्धारित कर सकते हैं। एक बार स्वरूप निर्धारित हो जाने पर बार-बार इस पर विचार करते रहते हैं और इसमें जो भी सुधार व परिवर्तन अपेक्षित होता है, वह करते रहते हैं। यह भाषा जो हमें पदार्थ का ज्ञान, सत्य व असत्य का ज्ञान व विवेक प्रदान करने में मुख्य व अत्यावश्क साधन है, हमें अपने माता-पिता, समाज व पूर्वजों से प्राप्त हुई है। पूर्वजों को अपने पूर्वजों से, इस प्रकार इसका आरम्भ सृष्टि उत्पत्ति व मनुष्यों के आविर्भाव से हुआ। आदि मनुष्यों को भाषा की आवश्यकता थी। क्या यह भी उन्हें अपने शरीर, ज्ञान व कर्मेन्द्रियों की भांति ईश्वर से प्राप्त हुई या फिर मनुष्यों ने इसकी उत्पत्ति स्वयं की ? यह विचार करना पड़ता है कि क्या मनुष्य मिलकर भाषा का निर्माण या उत्पत्ति कर सकते हैं या नहीं। भाषा की उत्पत्ति के लिए अक्षर, शब्द, वाक्य, व्याकरण, वचन, भूत, वर्तमान व भविष्य के अनुरूप क्रिया पदों का प्रयोग आदि का ज्ञान आवश्यक है। इस पर गम्भीरता से विचार करने पर यह तथ्य सामने आता है कि आदि काल की प्रथम पीढ़ी का मनुष्य, जो सर्वथा अज्ञानी है, वह अकेला या मनुष्य समूह में अक्षरों को तय व निर्धारित नहीं कर सकता। अक्षरों को तय करने के लिए विचार-चिन्तन करना होगा, जो कि बिना भाषा के नहीं हो सकता। अत: भाषा की उत्पत्ति की गाड़ी अपने स्थान से हिल ही नहीं सकती, चलना तो दूर की बात है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि भाषा अपौरूषेय है और वह सृष्टि के आरम्भ में अमैथुनी सृष्टि में ईश्वर से उसी प्रकार प्राप्त होती है जिस प्रकार हमें मानव शरीर प्राप्त होता है। यहां हम माता का उदाहरण ले सकते हैं। माता सन्तान को जन्म देती है और भाषा भी वही सिखाती है। इसी प्रकार ईश्वर ने अमैथुनी सृष्टि में मनुष्यों को जन्म भी दिया और माता के समान भाषा का ज्ञान देकर अनुग्रहित किया। यह विचारणीय हो सकता है कि ईश्वर ने आदि चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को ही भाषा का ज्ञान दिया हो और उन्होंने अन्य सभी मनुष्यों को कराया हो, परन्तु हमें यह भी अव्यवहारिक प्रतीत होता है और हम अनुभव करते हैं कि परमात्मा ने सभी मानवों, स्त्री व पुरूषों को बोलचाल की भाषा का ज्ञान तो अवश्य दिया था अन्यथा बिना भाषा के ज्ञान के सबका जीवन खतरे मे पड़ जाता। जो विद्वान व बन्धु हमारी इस धारणा से असहमत हो वह हमें अपने सुसंगत विचार प्रेषित करने का कष्ट करें जिससे इसके छूटे हुए पहलुओं पर विचार किया जा सके।

(शेष पृष्ठ 6 पर)

www.thearyasamaj.org

पुनर्जन्म: सिद्धि व लाभ

-ले० श्री इन्द्रजित् देव, यमुनानगर (हरियाणा)

वैदिक धर्म की सभी मान्यताएं वैज्ञानिक हैं व इनका आधार सत्य, युक्ति व प्रमाण हैं। पुनर्जन्म उनमें से एक विशेष तथ्यात्मक मान्यता है। धीरे-धीरे वैदिक धर्म आर्यावर्त से बाहर भी गया था तथा इसकी पुनर्जन्म सम्बन्धी मान्यता की सर्वत्र स्वीकृति प्राप्त रही है परन्तु आज इसे आर्यावर्त में उत्पन्न हुए मतों व शुद्ध वैदिक धर्मियों के अतिरिक्त कोई नहीं मानता। इसके विरोध के स्वर भी कभी भारत से उठे थे जब चार्वाक दर्शनकार ने घोषणा की थी-

यावत् जीवेत् सुखं जीवेत्
ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं।
कुत : 11

अर्थात् जब तक जिओ, अच्छी मस्ती में जिओ, सुखपूर्वक जिओ। यदि तुम्हारे पास धन नहीं है तो भी निश्चिंत होकर किसी दूसरे व्यक्ति से ऋण लेकर खाओ-पिओ, मौज करो। इस बात की चिन्ता मत करो कि ऋण कैसे उतारोगे क्योंकि यह एक जीवन व्यतीत करके जब जाओगे तो तुम्हारा शरीर तो भस्म होगा परन्तु मुड़कर फिर तुमने आना नहीं है। ऋण कौन चुकाएगा ? किसको चुकाओगे ? न ऋण लेने वाला बचेगा तथा न ही ऋण देने वाला ही होगा।

Eat, Drink and be Merry का पश्चिमी सिद्धान्त चार्वाक दर्शन का ही अंग्रेज़ी अनुवाद है और हम कह सकते है कि कभी यह भारतवर्ष जगत् गुरु रहा है तो जगत् को भोगी-विलासी बनाने का प्रारम्भ भी हमारे ही देश ने किया था।

आवागमन का सिद्धान्त अत्यन्त प्राचीन है। एक ऐसा समय भी था, जब सम्पूर्ण संसार इसे स्वीकार करता था। चीन, यूनान, मिश्र, ईरान, रोम, मैक्सिको, अमरीका, अरब, रूस व आस्ट्रेलिया के निवासी भी पूर्णत: इसे मानते थे। यह तब की बात है, जब संसार में प्रेम व शान्ति का सम्पूर्ण जगत् पर साम्राज्य था। बरेली में सन् 1863 ईस्वी में पादरी टी. जी. स्काट ने भी इन शब्दों में इस तथ्य को स्वीकार किया है-

"प्राचीन मिस्र वालों ने इसको मान लिया। इसी प्रकार यूनानियों ने और अंग्रेज़ों ने तथा हमारे पुराने द्रविड़ लोग जो हमारे गुरु थे, यही सिखाते थे और हम लोग सबके सब मानते थे।"

राम कृष्ण मिशन द्वारा प्रकाशित एक पुस्तिका के अनुसार ईस्वी सन् 143 ई. में अस्तंबोल में तत्कालीन पोपों की एक बैठक हुई थी जिसमें यह निर्णय लिया गया था कि भविष्य में वे पुनर्जन्म को नहीं मानेंगे परन्तु उनकी यह घोषणा 13वीं-14वीं सदी से डगमगाने लगी है। ईसाई पादरी तब दान लेकर दानदाताओं को एक हुण्डी लिख देते थे कि इस व्यक्ति ने यहां इतना दान दिया है, अत: यह मृत्यु के पश्चात् जब कब्र से उठेगा तो इसे Heaven अर्थात् स्वर्ग में स्थान व सुविधाएं दी जाएं। इसी प्रकार इस्लाम मतानुयायी कहते हैं कि बहिश्त अर्थात् स्वर्ग में जाने वालों को हूरें (अप्सराएं) व शराब की नदियां मिलेंगी, जब वे कब्रों से कयामत के दिन उठेंगे क्योंकि वे मुहम्मद पर ईमान लाते हैं। यह परोक्षत: पुनर्जन्म होने की स्वीकृति ही है क्योंकि बिना नया शरीर प्राप्त किए कोई भी आत्मा पदार्थों का सेवन ही नहीं कर सकती। आत्मा व शरीर का संयोग ही तो जन्म है। इसके बावजूद कुछ विधर्मी व नास्तिक बड़े हठपूर्वक यह घोषणा करते हैं कि पुनर्जन्म होता नहीं। होता है तो हमारे प्रश्नों के उत्तर दो।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने पुनर्जन्म सम्बन्धी उन लोगों के प्रश्नों के उत्तर बड़ी कुशलता व सफलता से "सत्यार्थ प्रकाश" के नवम् समुल्लास, "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" व "उपदेश मंजरी" में देने का प्रयास किया है, जो लोग पुर्नजन्म में विश्वास नहीं करते। इसके अतिरिक्त अमर बलिदानी पंडित लेखराम जी ने "कुलियात आर्य मुसाफिर" के दोनों खण्डों में इस विषय में उठाई शंकाओं का प्रामाणिक समाधान किया है। इस निबन्ध द्वारा हम कुछ समाधानों की चर्चा कर रहे हैं। पुनर्जन्म सम्बन्धी सबसे बड़ा प्रश्न यह किया जाता है कि वर्तमान जन्म में हमें इस सम्बन्धी सबसे बड़ा प्रश्न यह किया जाता है कि वर्तमान जन्म में हमें पिछले जन्मों की स्मृतियां रहती नहीं ? महर्षि का उत्तर यह है कि इस व्यवस्था में ईश्वर की महती कृपा है कि पिछले जन्मों की स्मृतियां नहीं रहतीं। हमें वर्तमान जीवन के आरम्भिक पांच वर्षों तक की घटनाएं स्मरण नहीं रहती क्योंकि जीव अल्पज्ञ हैं, त्रिकालदर्शी नहीं। इसलिए स्मरण नहीं रहता। पूर्वजन्म की बात दूर रही, इसी जीवन में जब जीव मां के गर्भ में था, तब की कोई भी बात हमें स्मरण नहीं रहती। इसी में जीव व जगत् का सुख निहित है।

मैं अनेक बार चक्रवर्ती राजा बना हूं तो कभी भिखारी बनकर भी जीवन निर्वाह करना पड़ा है। किसी जीवन में दान दाता रहा हूं तो कभी मैं चोर भी रहा हूं। यदि मुझे वे घटनाएं स्मरण आ जाएं तो वर्तमान जीवन में कभी ग्लानि में डूब जाता तो कभी अहंकार में लीन रहता। यदि मैं दूसरे लोगों को बताता कि मैं पिछले किसी जन्म में चक्रवर्ती राजा था तो वे मेरे कथन पर हंसते व कहते-चल, चल, झूठ मत बोल। यह मुंह और मसूर की दाल। यदि उन्हें पता चलता कि मैं चोरी भी करता रहा हूं तो वे व्यंग्य व परिहास करते व संसार जनों को कहते कि इस व्यक्ति से सावधान रहो।

हमें पिछली घटनाएं स्मरण नहीं रहती, इसी में सुख है। वस्तुत: यह ईश्वर का बड़ा वरदान है। ईश्वर हमारी स्मृतियों को छीन कर हम पर बहुत बड़ी कृपा करता है। पिछले जन्मों की स्मृतियों को लेकर जीव अतीतगामी हो कर बना रहेगा, वह भविष्य गामी नहीं बनेगा। किसी विशेष घटना पर ही जिसका मस्तिष्क रूक जाता है, वह पागल हो जाता है। किसी पागल से मिलकर देखिए-वह अपनी किसी घटना को ही स्मरण करता रहता है, दोहराता रहता है। वर्तमान का आभास उसे नहीं होता। भविष्य की कोई योजना उसकी बुद्धि में नहीं आती। बाधा हटाए बिना यात्रा सुगम व सरल नहीं बनती। अतीत की गांठ बांधना हमें आगे बढ़ने में बाधक है, यह मनोवैज्ञानिकों का विचार है।

एक आक्षेप यह किया जाता है कि यदि हम पुनर्जन्म को मानेंगे तो हम चरित्रहीन व ईश्वर चरित्रहीनता को बढ़ावा देने वाला सिद्ध होता है। यह आक्षेप आगरा में सन् 1880 ई. में मौलवी तुफैल अहमद ने महर्षि दयानन्द के समक्ष रखा था। महर्षि ने पूछा था-"वह कैसे ?"

"एक व्यक्ति मर गया। इस जन्म में जो उसकी बेटी है, सम्भव है कि अगले जन्म में वही उसकी पत्नी बन जाए तो उससे सम्बन्ध बनाने से वह चरित्रहीन बनेगा।"

"बाप व बेटी का सम्बन्ध शरीर का है, आत्मा का नहीं। एक आत्मा का दूसरी आत्मा से कोई सम्बन्ध नहीं होता। इसलिए यह आक्षेप आत्मा पर लागू नहीं होता।"

ईश्वरीय व्यवस्था को ठीक समझने पर ही यह ज्ञान हो जाता है कि आत्मा का सम्बन्ध दूसरी आत्मा से शरीर के कारण व माध्यम से ही है। अन्यथा एक आत्मा किसी दूसरी आत्मा का न पिता है, न पुत्र तथा न ही पति या पत्नी। आंख बंद होते ही समस्त लौकिक व शारीरिक सम्बन्ध समाप्त हो जाते हैं, Expire हो जाते हैं। अत: यह आक्षेप व्यर्थ है।

एक आक्षेप यह किया जाता है कि पाप/दुष्कर्म तो मनुष्य करता है परन्तु आगामी जीवन में इनका फल पशु-पक्षी को मिलता है तो यह ईश्वर का अन्याय है। मनुष्य के पापों का दण्ड भी उसे ही मिलना चाहिए। घोड़े, गधे या सुअर को दण्ड देना ईश्वर का न्याय नहीं है। इसका उत्तर यह है कि प्रश्नकर्त्ता को यह ज्ञान ही नहीं है कि कर्मों का कर्त्ता कौन है व उनका भोक्ता कौन है। वास्तविकता यह है कि कर्मों का कर्त्ता जीवात्मा है व फल का भोक्ता भी वही है। जीवात्मा व मनुष्य है तथा न ही घोड़ा, गधा या सुअर जीवात्मा है। जिस-जिस योनि में जीवात्मा जाता है, उसे उसके आधार पर उसका वैसा नाम हो जाता है। **(क्रमश:)**

www.thearyasamaj.org

पृष्ठ 4 का शेष-वेद का ज्ञान.....

अब ईश्वर से बोलचाल की भाषा का भी ज्ञान तो प्राप्त हो गया परन्तु ईश्वर से हमारा सम्बन्ध, उसका स्वरूप, उसके कार्य, उसकी हमसे अपेक्षायें, हमारा स्वयं के प्रति कर्तव्य, माता-पिता, आचार्य, विद्वानों, राजा, राज्य कर्मचारियों, वैद्यों, कृषकों, अपने नौकरों-सेवकों, समाज के प्रति कर्तव्य, देश के प्रति कर्तव्य, सुरक्षा सम्बन्धी कार्य व उनका निर्धारण व व्यवस्था आदि अनेकानेक विषय सामने आते हैं जिनका निर्धारण कर व्यवस्था बनानी है। क्या आरम्भ के मनुष्य मात्र भाषा का ज्ञान प्राप्त कर लेने पर भी इन सब विषयों का वेद के समान ज्ञान शीघ्र प्राप्त कर सकते हैं, यह कदापि सम्भव नहीं है। हम देखते हैं कि आज जापान, अमेरिका, इंग्लैण्ड, जर्मनी, फ्रांस, आस्ट्रेलिया व कनाडा आदि समुन्नत माने जाते हैं। क्या वह आज तक आत्मा, परमात्मा व प्रकृति के सत्य स्वरूप का निर्धारण कर पाये? जब विगत 2 अरब वर्षो में नहीं कर पाये तो आगे भी नहीं कर पायेगें। इसके लिए ईश्वर से वेदों का ज्ञान प्राप्त होना परम आवश्यक है जो ईश्वर के सर्वशक्तिमान होने से कठिन नहीं है। अत: उसने वेद के नाम से प्रसिद्ध चार वेदों का ज्ञान सृष्टि के आरम्भ में दिया है। यह ज्ञान ईश्वर ने अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा के माध्यम से दिया था जैसा वर्णन स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश आदि अपने ग्रन्थों में किया है।

ऊहापोह करने के बाद हमें यह तथ्य भी ज्ञात हुए हैं कि चारों वेद सर्वथा अपने मौलिक रूप में सुरक्षित है। यद्यपि उनमें कहीं कोई परिवर्तन नहीं हुए हैं, फिर भी यदि अल्प बुद्धि के कारण हम या हमारे कुछ सत्यान्वेशी बन्धु ऐसा मानते हैं तो हमारे निजी ज्ञान के अनुसार यह मंत्रों के छन्द, स्वर व देवता आदि निर्धारण से कुछ काल पूर्व हो सकता था। यदि मन्त्रों के छन्द, स्वर व देवता आदि निर्धारित करने से पूर्व किन्हीं की कल्पना व शंका के अनुसार कुछ नाम-मात्र परिवर्तन हुआ भी होगा, जो कि असम्भव प्रतीत होता है, तो आज के साधारण लोग अपनी ऊहा से उन परिवर्तनों को जान नहीं सकते, शुद्ध करने की तो बात बहुत दूर है। अत: इस स्थिति में किसी प्रकार की छेड़-छाड़ करना उचित नहीं है। यदि कोई इस दिशा में प्रयास करेगा व कर रहे हैं, तो वह शुद्ध करने के नाम पर इन्हें इतना अशुद्ध कर देगें कि मूल के नष्ट होने का खतरा है। हां, हमें शंकायें उठाने का पूरा अधिकार है। यदि कोई अन्य विद्वान उन शंकाओं का समाधान न कर सके तो फिर हमें ऋषियों द्वारा निर्धारित सिद्धान्तों पर श्रद्धा रखते हुए उन पर सतत् विचार व चिन्तन करना चाहिये। योगाभ्यास कर समाधि की सिद्धि करनी चाहिये और तब ईश्वर साक्षात्कार के बाद उन शंकाओं का निवारण ईश्वर से करना चाहिये जैसा कि सम्भवत: महर्षि दयानन्द व पूर्व के अन्य ऋषि करते थे। ऐसा करने पर हमें हमारी सभी शंकाओं का यथार्थ समाधान मिल जायेगा। ऐसा यदि होता है तो फिर हमारा कर्तव्य बनता है कि जिन शंकाओं को लेकर हम वेदों में अशुद्धियां मानते थे उन्हें उनके समाधान सहित विद्वानों के सामने प्रस्तुत करें जिससे भविष्य में उन शंकाओं के कारण लोग वेदों के प्रति अश्रद्धा का शिकार न हों। इससे कहीं कोई विवाद तो होगा नहीं, वेद एवं वैदिक धर्म व संस्कृति की समृद्धि व रक्षा होगी।

वेद ईश्वरीय ज्ञान ही है जो ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को दिया था। उन्होंने वह ज्ञान उन ऋषियों व ब्रह्मा जी को हुई ईश्वरीय प्रेरणा के अनुरूप 'ब्रह्मा जी' को प्रदान किया और परस्पर भी ग्रहण किया। ब्रह्मा जी ने उस वेद ज्ञान को आत्मसात् कर उसे अमैथुनी सृष्टि के अन्य लोगों को अन्य चार ऋषियों के साथ मिलकर पढ़ाया। ब्रह्मा जी ने वेदों का ज्ञान प्राप्त कर लिया तो वह उसका प्रयोग, अभ्यास, उपदेश, अध्यापन आदि भी कराते थे। उस समय उनके पास इससे महत्वपूर्ण अन्य कोई कार्य नहीं था। खाली व आलसी वह रह नहीं सकते थे। वेदों का ज्ञान हो जाने पर वह सन्ध्या व योगाभ्यास आदि भी अवश्य करते रहे होगें, इसमें भी किसी प्रकार की शंका को कोई स्थान नहीं है। सन्ध्या, योग व ईश्वर साक्षात्कार द्वारा उन्हें वेदों को लिपिबद्ध करने का ज्ञान भी प्राप्त हो गया होगा व उन्होंने देवनागरी लिपि को भी साक्षात् कर लिया होगा। ऐसा होने पर वेदोपदेश के साथ उन्होंने निस्सन्देह उस लिपि को अपने शिष्यों को सिखाया होगा। वेदों का ज्ञान होने पर वेदों को सुरक्षित रखने के लिए कागज, लेखनी व स्याही का आविष्कार भी, हमें लगता है, सम्भव था और वह भी किया गया होगा। इसके बाद वेदों की सुरक्षा का कार्य, श्रुति, अध्ययन, विचार, चिन्तन, मनन व परस्पर वार्तालाप आदि द्वारा चलता रहा और शिष्यों ने उसे लेखबद्ध, कागज या कागज की तरह प्रयोग किए जा सकने वाले वृक्ष व पौधों के पत्तों वा पत्रों पर किया होगा। क्योंकि आदि काल में सभी लोगों का कार्य अध्ययन करना ही मुख्य था, अत: ब्रह्मा जी व अन्य चार ऋषियों की सहायता से उनके शुद्ध रूप में कोई व्यतिक्रम उपस्थित नहीं हुआ होगा। इसका कारण ज्ञानियों के होते हुए अज्ञानियों की कुचेष्टायें या तो होती ही नहीं या होने पर वह असफल हो जाती है। अत: इस प्रकार सामान्य रूप से वेदों की सुरक्षा होती रही व अध्ययन चलता रहा। बाद में जब स्मृति आदि कुछ मन्द होने लगी तो उसकी सुरक्षा के लिए अन्य उपाय भी किये गये जिनमें मन्त्रों के छन्द व स्वरों तथा देवता आदि का निर्धारण किया गया जो अद्यावधि चला आ रहा है। हम एक छोटा सा उदाहरण लेकर अपनी बात कहना चाहते हैं। महर्षि दयानन्द ने संन्ध्या व अग्निहोत्र की विधि लिखी है। सभी आर्य सन्ध्या व अग्निहोत्र के मंत्रों को जानते हैं व उनका प्रयोग करते हैं। यदि एक गायत्री मन्त्र को ही लें, तो जिस प्रकार महर्षि दयानन्द के काल से अब तक इसमें कोई परिवर्तन नहीं आया है इसी प्रकार हम विश्वास से कह सकते हैं कि यह मन्त्र सृष्टि के आरम्भ से ही ऐसा का ऐसा पूर्ण व शुद्ध रूप में है। इसी प्रकार के अन्य सारे मन्त्र हैं जो सृष्टि के आरम्भ में थे। अत: वेदों में सभी मन्त्र अपने शुद्ध रूप में है। हमें चारों वेदों को पूर्णत: शुद्ध व मौलिक ईश्वरीय ज्ञान इस लिए भी स्वीकार करना है कि इसके हमारे पास अनेक प्रमाण हैं और महर्षि जैमिनी पर्यन्त सबकी इस पर श्रद्धा रही है। श्रद्धा का अर्थ ही सत्य में आस्था व विश्वास करने को लिया जाता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती वेद विद्या के अन्यतम् विद्वान थे, वह ईश्वर भक्त, योगी व साक्षात्कृतधर्मा द्रष्टा थे, उनकी मेधा ने भी इसे स्वीकार किया था, अत: हमें उनका अनुकरण करना है।

हम यह भी कहना चाहते थे कि जिस प्रकार हर व्यक्ति अपना यथार्थ स्वरूप जानता है। दूसरा व्यक्ति पूर्णत सही-सही उसका निर्धारण नहीं कर सकता। यदि कोई व्यक्ति अपना स्वरूप अपने परिवार में पुत्रों आदि को न बताये और पूर्वजों के बारे में जो जानकारी उसके पास है वह सूचित न करे तो नई पीढ़ियां बहुत सी बातों से वंचित हो जाती है। ईश्वर को अपने स्वरूप का ज्ञान है व पूर्व सृष्टियों तथा जीवों के कर्मों का भी पूर्ण ज्ञान है। अपना स्वरूप भी वह स्वयं ही बताये तो सबको ठीक-ठीक विदित होगा अन्यथा नहीं। वेदों में हम ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति (कारण व कार्य) का जो स्वरूप देखते हैं, वह समस्त ऋषिगण बिना ईश्वर की सहायता व प्रेरणा के प्राप्त नहीं कर सकते थे। अत: महर्षि दयानन्द सरस्वती के कथनानुसार वेदों में सब सत्य विद्याओं का निर्भ्रान्त ज्ञान प्राप्त होता है जिससे यह सिद्ध है कि वेद ईश्वरोक्त हैं, मनुष्योक्त नहीं। वेदों में मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक के कर्तव्य, अकर्तव्य व संस्कारों आदि का विधान है। यज्ञ-अग्निहोत्र की भी आज्ञा है। आयुर्वेद आदि अनेक चिकित्सा-विज्ञान की पुस्तकों का आधार भी वेद हैं, अत: मंत्र-संहितायुक्त वेद इस सृष्टि के निर्माता परमात्मा द्वारा मनुष्यों को प्रदत्त ज्ञान है जो उसने सृष्टि के आरम्भ में दिया था। हम वेदों को ईश्वरोक्त सकारण व युक्तियों से सिद्ध होने से मानते हैं। किसी भी आर्य या वैदिक मत के अनुयायी को वेदों के ईश्वरोक्त न होने की बात से भ्रमित नहीं होना चाहिये। यदि कोई इससे विपरीत मानता है तो उसको स्वतन्त्रता है, वह माना करे।

www.thearyasamaj.org

शोक प्रस्ताव

आर्य समाज जालन्धर छावनी में दिनांक 1 दिसंम्बर 2013 को साप्ताहिक सत्संग के पश्चात् एक शोक सभा का आयोजन किया गया जिस में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी की बड़ी बहन स्वर्गीय श्री मती सरला शर्मा जी के गत दिनों देहावसान पर गहरा दु:ख व्यक्त किया गया और उन की आत्मिक शान्ति के लिए प्रभु से प्रार्थना की गई। इस प्रार्थना सभा में आर्य समाज के प्रधान श्री चन्द्र गुप्ता, मंत्री जवाहर लाल, कृष्ण लाल गुप्ता, अशोक जावेद रघुनाथ ठाकुर, रघुवीर सिंह जादौन, गनपत राम सोनी चन्द्रशेखर अग्रवाल, सुरेश कुमार, दीपक जैन ने अपने श्रद्धा सुमन अर्पित किए।

आर्य समाज मन्दिर फरीदकोट का वार्षिक महोत्सव

आर्य समाज मन्दिर फरीदकोट का वार्षिक महोत्सव दिनाँक 15,16, 17 नवम्बर 2013 तक बड़े ही हर्षोल्लास व धूमधाम से मनाया गया। 17 नवम्बर को इस का समापन हुआ। इस महोत्सव में वेदों के प्रकाण्ड विद्वान ओजस्वी वक्ता, तेजोमय व्यक्तित्व, धारा प्रवाह प्रवचन जिसे सुनकर श्रोता आनन्दित हो जाते थे। सुयोग्य आचार्य योगेन्द्र जी याज्ञिक आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय होशांगाबाद (म०प्र०) से पधारे जिन्होंने तीनों दिन ऐसे सुन्दर, मन्त्र मुग्ध कर देने वाले विचार दिये जिसे सुनकर आर्य जनता धन्य हो गई, वेद, यज्ञ, पितृभक्ति, देश भक्ति, दान, कर्त्तव्य परायणता, सेवा भाव, परोपकर आदि विषयों पर व्याख्यान देकर लोगों को लाभान्वित करते रहे। सुन्दर-सुन्दर भजन पं० नरेश निर्मल जी मुजफ्फरनगर वाले सुनाकर व ज्ञान वर्धक वचनों से लोगों के जीवन को धन्य करते रहे। फरीदकोट के लोगों का उत्साह तो देखते ही बनता था बहुत से लोगों ने जीवन में पहली बार ऐसा सत्संग सुना आर्य समाज फरीदकोट के लिए इतिहास बन गया कि फरीदकोट के आस-पास की आर्य समाजों ने बढ़-बढ़ कर हिस्सा लिया। मोगा से श्री सत्यप्रकाश उप्पल, श्री विनोद धवन, श्री रोहताश उप्पल, श्री राजेश सूद, श्री इन्द्र सूद, श्री महेन्द्र पाल गर्ग, पं० दिवाकर भारती, फिरोजपुर से श्री वेद प्रकाश बजाज, श्री कुलदीप वर्मा, पं० सुनील दत्त शास्त्री कोटकपूरा से श्री ललित बजाज, डा० देवराज, डा० विशेष जी, वीरेन्द्र शर्मा, प्रेम कुमार शर्मा प्रिंसीपल श्रीमती सत्या मक्कड़, स्टॉफ व आर्य स्कूल के समस्त बच्चे विशेष रूप से पधारे। आर्य समाज जीरा के प्रधान ओम प्रकाश जी, सुभाष जी, पं० कुणाल किशोर जी, श्री रमेश चन्द्र महिला आर्य समाज जीरा की प्रधाना श्रीमती सुमित्रा जी, बुढ़लाड़ा से श्री जोगिन्दर जोशी, श्री राजकुमार पाण्डे, प्रि० हेमराज शर्मा, एडवोकेट मुकेश कुमार, मानसा से पं० महावीर प्रसाद शास्त्री, प्रो० विशाल गोयल, श्री कृष्ण कुमार, श्री रामपाल, श्री सियाराम, श्री महेश कुमार श्री राजेश कुमार सपरिवार सहित इस महोत्सव की सुन्दरता को चार चाँद लगा दिये।

प्रथम दिन मुख्य मेहमान डा० अनिल वर्मा प्रिंसीपल बजिन्द्रा कालेज फरीदकोट, स्वामी सूर्य देव जी गोनियाना, दूसरे दिन श्री सत्यप्रकाश उप्पल व तीसरे दिन डा० निर्मल कौशिक प्रिंसीपल मालवा डिग्री कालेज कोटकपूरा ने अध्यक्ष पद को सुशोभित किया व अपने उद्बोधनों से मार्ग दर्शन दिया साथ ही आर्य समाज को संगठित होकर कार्य करने के लिए भरपूर सहयोग देने का वादा किया। तीनों दिन मेहमानों, व श्रोताओं के लिए दोनों समय भोजन व्यवस्था की गई। पं० कमलेश कुमार शास्त्री जी के मार्गदर्शन व मन्त्री श्री सतीश कुमार शर्मा, प्रधान कपिल सहूजा, श्री प्रमोद कुमार व नरेश देवगन के सहयोग व निर्देशन में सारा कार्य सम्पन्न किया गया इस महोत्सव में लोगों ने तन से मन से व विशेष रूप से धन के द्वारा योगदान दिल खोल कर किया।

-सतीश कुमार शर्मा मन्त्री आर्य समाज मन्दिर

श्री रणवीर कुमार बत्ता नहीं रहे

आर्य समाज मालेरकोटला के प्रधान श्री रणवीर कुमार बत्ता का गत दिनों देहावसान हो गया। उनकी आत्मिक शांति के लिए 13 दिसम्बर 2013 को एक प्रार्थना सभा का आयोजन किया गया जिसमें आर्य समाज के सभी सदस्यों ने दो मिनट का मौन धारण कर उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। **-तरसेम गुप्ता प्रचार मन्त्री**

आर्य समाज धूरी में विश्व शान्ति महायज्ञ सम्पन्न

आर्य समाज धूरी में दिनांक 27-11-013 से लेकर दिनांक 1-12-013 तक विश्व शान्ति व गायत्री महायज्ञ एवं आध्यात्मिक दिव्य सत्संग का प्रोग्राम प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी बड़ी धूम धाम से मनाया गया। दिनांक 27-11-013 दिन बुधवार को आर्य सीनियर सैकण्डरी स्कूल धूरी के प्रागण में प्रात: 11.00 बजे स्वामी सूर्यदेव जी व महाशा प्रतिज्ञापाल जी के द्वारा ओ३म् धवज फहराया गया। इसके बाद प्रात: 11.00 से लेकर 2.00 बजे तक स्वामी सूर्यदेव जी व प्रतिज्ञापाल जी को रथ पर विराजमान करके रामगढीया गुरुद्वारा रोड़ ककडवाल पुल, लोहा बाजार, सदर बाजार, पुरानी अनाज मण्डी व धूरी के शहरों में विशाल शोभा यात्रा निकाली गई। दिनांक 28.11.013 से लेकर दिनांक 1.12.013 दिन रविवार तक विशेष आकर्षण: विद्यार्थियों व सभी सदस्यों से आर्य समाज के महामंत्री रामपाल आर्य जी ने 9.50 मिनट से 10.00 बजे तक धार्मिक राष्ट्रीय संस्कारों और सामान्य ज्ञान को बढ़ाने हेतु प्रश्नोतरी की गई विजेताओं को गुरूकुल कुरूक्षेत्र से आए हुए आचार्य देवव्रत जी व पूर्णाहुति के अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के आए हुए उपप्रधान देवेन्द्रनाथ शर्मा जी के द्वारा ईनाम दिये गये।

प्रोग्राम की शुरूआत में सर्वप्रथम पं. अमरेश शास्त्री जी व आचार्य देवव्रत जी के ब्रह्मत्व में बृहद् यज्ञ को वैदिक मंत्रों द्वारा सम्पन्न किया गया जिसमें यज्ञ के मुख्य यज्ञमान आर्य समाज के प्रधान श्रीमान प्रहल्लाद आर्य जी, कोषाध्यक्ष अशोक जिन्दल जी, अशोक गुप्ता जी, पवन जी, कर्मचन्द्र आर्य, रमेश आर्य, सोमप्रकाश आर्य : प्रमित आर्य C.G.M. करनाल विजय आर्य, विकास जिंदल, विवेक जिंदल जी, राजेश आर्य, वचन लाल गोयल स्त्री समाज की प्रधाना कृष्णा आर्य, मंत्राणी मधुरानी जी, शिमला देवी जी रेखा रानी दर्शना देवी जी, उर्मिला देवी जी एवं सभी अधिकारी गण इस यज्ञ में उपस्थित महानुभावों ने आहुतियां डालकर विश्व शान्ति के लिए प्रार्थना की। बरेली से आए हुए प्रसिद्ध आकाशवाणी भजनोपदेशक T.V. गायक पं० भानुप्रकाश जी व कलानौर से आए हुए भजनोपदेशक श्री प्रीतम जी मुसाफिर जी ने उपदेश भजन व रामायण की चौपाईयां सुनाकर लोगों का मन मोह लिया व गुरूकुल कुरूक्षेत्र से आए हुए वैदिक प्रवक्ता आचार्य देवव्रत जी के उपदेश सुनकर सभी ने अपने जीवन में धारण किया और अपने जीवन को धन्य किया। यज्ञ की पूर्णाहुति 1 दिसम्बर 2013 को हुई। इस अवसर पर आए हुए सभा के उपप्रधान देवेन्द्रनाथ शर्मा जी ने वैदिक धर्म के विचारों को सभी के अन्दर धारण करने के लिए प्रेरित किया एवं पूर्णाहुति के दिन श्री रजनीश शर्मा सी जे एम चण्ड़ीगढ से विशेष रूप से उपस्थित हुए।

इस अवसर पर आर्य स्कूल, आर्य कालेज, यश चौधरी हाई स्कूल व सारे बच्चों ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया।

इस अवसर पर संचालक वेद प्रचार उत्सव यश चौधरी के मैनेजर सतीश आर्य जी प्रधान प्रहल्लाद आर्य जी, सीनियर मंत्री वरिन्द्र कुमार आर्य जी, सरपरस्त श्याम आर्य जी (पानीपत से) प्रिंसीपल वी० एल० कालिया, धर्मदेव जी, मोनिका वाटस, संरक्षक आर. पी० शर्मा जी, डा० एस. के सरीन जी, डा० रामलाल गोयल, विकास शर्मा (एडवोकेट) विकास जिन्दल जी, विवेक जिन्दल जी, अरविन्द जिन्दल जी, महाशा राजपाल जी, वासुदेव आर्य जी, रघुनाथ शर्मा जी, जसवीर रत्न जी (एडवोकेट) इस समारोह में प्रतिदिन मुख्य मेहमान बने। श्री बी. वी. बांसल एडवोकेट, श्री रघुवीर चन्द जी (प्रधान नगर कौंसिल धूरी) डायरेक्टर विजय कुमार गोयल, श्री रविकान्त जी, रमेश कुमार जी (डायरेक्टर अर्पण फूड धूरी, अरुण कुमार गोयल जी (डायरेक्टर, राइसीला फुड जगराओ श्री पुरूषोतम दास कांसल प्रधान इण्डस्ट्रियल चैम्बर (जिला संगरूर) श्री कमल किशोर बांसल, अरूण गर्ग, नरेश बांसल, दविन्द्र कुमार दीपक, हर्षवन्धन बांसल एवं सभी आर्य समाजों के सदस्य एवं अधिकारी इस कार्यक्रम में बढ़-चढ़ कर भाग लिया। इसके बाद शान्तिपाठ किया गया एवं सभी को ऋषि प्रसाद वितरण किया गया।

-प्रहलाद कुमार आर्य प्रधान आर्य समाज

www.thearyasamaj.org

वेद वाणी

यस्मै त्वं सुद्रविणो ददाशो ऽनागस्त्वमदिते सर्वताता।
यं भद्रेण शवसा चोदयासि प्रजावता राधसा ते स्याम॥

-ऋ० १/९४/१५

विनय-हे प्रभो! हम तेरे ही हो जायँ। हम चाहते हैं कि हम अपने न रहें, तेरे हो जायँ। तेरे होने से हम तर जायँगे। परन्तु तेरे हो जाने वाले वे सौभाग्यशाली पुरुष होते हैं जिनके लिए तू 'निरपराधत्व' का वर प्रदान कर देता है। ऐसे पुरुष नाना प्रकार के कार्य किया करते हैं किन्तु उनके सब कर्म-विस्तार में तुम्हारी कृपा से सदा निर्दोषता रहती है। हे अखण्ड ? हे पूर्ण अग्ने ? तेरे सहारे किये गए कर्मों में अपूर्णता, दोष, त्रुटि कैसे रह सकती है? तू अदिति है; तुझमें दिति, खण्डता व बन्धन नहीं है। अतः तेरे हो चुके, तेरे अनन्य उपासक के कर्म भी खण्डित व दोषयुक्त क्यों होंगे ? तेरे ऐसे भक्तों के भयंकर से भयंकर दीखने वाले कर्म भी निर्दोष व उचित ही होते हैं। धन्य-धन्य हैं वे तेरी कृपा पानेवाली विशुद्ध आत्माएँ जिनके कि सब कर्म-प्रवाह में, हे सुद्रविण ? हे शुद्ध बल व धन वाले ? तुम ऐसी निष्पापता प्रदान करते हो। हम देखते हैं कि इससे उनका भी बल (शवस्) और धन (राधस्) असाधारण प्रकार का हो जाता है। उनका बल सदा 'भद्र' होता है और उनका धन 'प्रजावान्' होता है। उनमें तू जिस प्रकार के बल की प्रेरणा करता है वह बल भद्र होता है, कल्याण के लिए होता है। वह दुर्बलों के सताने व आत्महनन में लगने वाला अभद्र बल नहीं होता, किन्तु आत्मोन्नति कराने में, दुःखितों-पीड़ितों की रक्षा में निरन्तर लगने वाला बल होता है। एवं उनका धन-ऐश्वर्य 'प्रजावान्' होता है, प्रजनन करने वाला उत्पादक होता है। अनुत्पादक धन नहीं होता। उनका ऐश्वर्य कुछ भी सृजन न करने वाला नहीं होता, अपितु सदैव उत्तरोत्तर उत्तम-उत्तम परिणाम लाने वाला होता है। ओह! ऐसे धन के साथ ऐसे बल के साथ हम तेरे हो जायँ, हे अदिते! निष्पाप होकर हम तेरे हो जायँ।

साभार-वैदिक विनय, प्रस्तुति-रणजीत आर्य

आर्य महिला सभा अमृतसर का वार्षिक उत्सव सम्पन्न

आर्य महिला सभा अमृतसर का तीसरा वार्षिक उत्सव दिनांक 24 नवम्बर 2013 को माता जगदीश आर्या की अध्यक्षता में बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। वार्षिक उत्सव प्रातः हवन यज्ञ से शुरू हुआ। इसके पश्चात भजनों का आयोजन किया गया जिसमें भजनोपदेशक श्री विजय आनन्द जी फिरोजपुर वालों के मधुर भजन हुये। स्वामी विशोकायति जी, स्वामी मधुरानन्दा जी के वेदों पर प्रवचन हुये। इस उत्सव में अमृतसर की लगभग सभी आर्य समाजों के पदाधिकारियों ने भाग लिया जिसमें प्रमुख हैं आर्य समाज लारेंस रोड अमृतसर, माडल टाऊन अमृतसर, आर्य समाज लक्ष्मणसर अमृतसर, आर्य समाज शक्ति नगर अमृतसर, आर्य समाज गंडा सिंह वाला अमृतसर, आर्य समाज पुतलीघर अमृतसर, आर्य समाज जंडियाला गुरु। इसके साथ ही शहर के गणमान्य व्यक्तियों ने भी इसमें बढ़ चढ़ कर भाग लिया। इस अवसर पर माता जगदीश आर्या जी ने लगभग 72 हजार रुपये की राशि गरीब परिवारों में बांटी जिसमें लड़कियों के विवाह के लिये भी सामान बांटा गया। माता जगदीश आर्या जी ने आये हुये महानुभावों का धन्यवाद किया और ऋषि लंगर बांटा।

गुरुकुल का आयुर्वेद महान
घर-घर में मिले रोगों से निदान

गुरुकुल च्यवनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट, रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताज़गी के लिए

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि
दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे, मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व थकान में अत्यंत उपयोगी।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक
शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ठ
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरुकुल कांगड़ी-249404, ज़िला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिंटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।